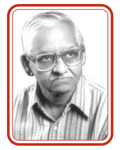

(1936-2009)

ध्यान पत्रिका

संस्थापक : डॉ० शम्भू नाथ

M.Sc., Ph.D.

वर्ष-24 फरवरी-2014 अंक-2

सब ओर से परिपूर्ण जल निधि में सलिल जैसे सदा।
आकर समाता, किन्तु अविचल सिन्धु रहता सर्वदा॥
इस भांति ही जिसमें विषय जाकर समा जाते सभी।
वह शान्ति पाता है, न पाता काम-कामी जन कभी॥

जैसे नाना नदियों के जल सब ओर से परिपूर्ण अचल प्रतिष्ठा वाले समुद्र में उसको विचलित न करते हुए ही समा जाते हैं। वैसे ही सब भोग जिस स्थित प्रज्ञ (भावातीत युक्त) पुरुष में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समा जाते हैं। वही पुरुष परम शान्ति को प्राप्त होता है; भोगों को चाहने वाला नहीं।
(भ० गीता 2.70)

प्रकाशक

ध्यान सत्संग सभा

पंजीकरण संख्या : 280/2013

हिसार (हरियाणा), मो. : 09416164702, 09416041346

Facebook : dhyansatsangsabha@gmail.com

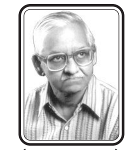

(1936-2009)

ध्यान

(Meditation)

✍ डॉ० शम्भूनाथ

यह मान्यता बहुत दिनों से चली आ रही है कि ईश्वर के ध्यान से हर मनुष्य के अन्दर ईश्वरीय शक्ति का जागरण हो जाता है; और ईश्वरीय शक्ति वह शक्ति है, जिसके द्वारा कुछ भी पाना असम्भव नहीं है। कुछ दिनों से केवल यह हुआ है कि समाज में ईश्वर के ध्यान की इतनी प्रयास-भरी विधियां प्रचलित हो गई हैं; कि आज का साधारण मनुष्य ध्यान के नाम से विचलित हो गया है। समाज में यह बात कूट-कूट कर भरी है कि ईश्वर का ध्यान इतना कठिन है; कि आज के व्यस्त जीवन के साथ इसका चलना असम्भव है; और जो काम हो ही नहीं सकता, इसमें समय नष्ट करना बिल्कुल बेकार है।

ध्यान इतना परिचित शब्द है; कि बचपन से ही व्यक्ति सुनता है-ध्यान से पढ़ो, ध्यान से खेलो इत्यादि। लेकिन फिर भी जब ईश्वर के ध्यान की बात उठती है, तो मनुष्य कुछ भ्रमित अवस्था में आ जाता है। उसके दिल व दिमाग में यह भर गया है कि ईश्वर के संदर्भ में ध्यान का अर्थ कुछ और ही है। समाज के आध्यात्मिक शिक्षकों द्वारा, जैसा वे सुनते हैं, वैसा करने लग जाते हैं। वे यह भी देखने की कोशिश नहीं करते कि जो असली अर्थ है, उसके आधार पर हमारा रास्ता ठीक है, या नहीं।

ध्यान का अर्थ

जब भी हम किसी क्रिया में व्यस्त होते हैं; तो केवल दो संभावनाएं होती हैं। कभी तो उस क्रिया में कुछ मजा आता है। दूसरे शब्दों में क्रिया सुखदायी होती है। और कभी इसके विपरीत होता है।

> **मन सुख का भूख है। इसलिए जिस क्रिया में उसे सुख मिलता है, मन अपने आप उसमें लगता है। मन की इस अवस्था को ध्यान की अवस्था कहते हैं। साफ-साफ शब्दों में, किसी क्रिया के सुख में मन का खोना ही, उस क्रिया में ध्यान है। यही ध्यान की परिभाषा हुई।**

ध्यान चाहे खेल का, चित्रपट का, लिखने पढ़ने का हो, या भगवद् भक्ति का। मन

के विचरण का क्षेत्र बदलने से ध्यान की परिभाषा नहीं बदलती।

ईश्वरीय शक्ति एक शक्ति है; और जीवात्मा ईश्वरीय शक्ति का भण्डार है। आत्मिक शक्ति हमेशा अन्दर की दुनिया (Absolute Field) में रहती है। (Absolute Field) अथवा अन्दर की दुनिया के सूक्ष्मतम् क्षेत्र सारे अनुभवों से परे हैं। इस क्षेत्र में ईश्वरीय शक्ति निराकार और निर्गुण अवस्था में रहती है।

जब भी यह शक्ति उभर कर बाहर की दुनिया (Relative Field) में प्रगट होती है; तब यह निराकार तो रहती है, लेकिन सगुण हो जाती है।

दुनिया की सारी शक्तियां निराकार होती हैं: चाहे बिजली की शक्ति हो या चुम्बक की, शारीरिक शक्ति हो; या बुद्धि की शक्ति। शक्ति कभी साकार हो ही नहीं सकती।

जब कोई भी शक्ति साकार हो ही नहीं सकती, तो ईश्वरीय शक्ति भी साकार नहीं हो सकती। जहां तक इस शक्ति के गुण का प्रश्न है:

जिन महात्माओं ने इसके गुणों को अनुभव किया है; उन्होंने यही बताया है कि यह शक्ति सच्चिदानन्द स्वरूप है। शास्त्र के इस वाक्य पर जरा ध्यान दें। अर्थ यही निकलता है कि ईश्वरीय शक्ति का गुण ही, उसका आकार है। एक मात्र आकार ही, पहिचानने में मदद करता है। दूसरे शब्दों में हम ईश्वरीय शक्ति को केवल सत् चित् और आनन्द के रूप में ही पहचान सकते हैं।

ध्यान की अवस्था में ज्यों-ज्यों मन में ईश्वरीय शक्ति उभरती है; उसमें सत्, चित् और आनन्द उभरने लगते हैं। ये तीनों, मन के गुण के रूप में उभरते हैं। इसमें आनन्द का गुण, मन और ईश्वरीय तत्व के बीच सम्पर्क की अनुभूति है। इसलिए सबसे पहले आनन्द की अनुभूति होती है। सत् और चित् के गुण, मन के अन्दर, ईश्वरीय तत्व का मन पर प्रभाव के रूप में उभरते हैं। इसलिए इनका अनुभव कुछ देर में होता है।

उदाहरण : दूध में बच्चे के शरीर के विकास की शक्ति है। बच्चे को कुछ दिन दूध पिला कर देखना पड़ता है। दूध के इस गुण का अनुभव कुछ, देर में होता है।

इस तरह हम देखते हैं कि : दुनियां के सारे अनुभव दो तरह के अनुभव में बंटे हैं - सम्पर्क अनुभूति और सम्पर्क के प्रभाव की अनुभूति।

हमने ऊपर देखा; आनन्द, मन और ईश्वरीय तत्व के सम्पर्क की अनुभूति है। इसलिये ईश्वरीय शक्ति को आनन्द के रूप में पहिचानना ज्यादा सरल है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी स्वान्त: सुख की बात कही है :

वे समाज को यही बताना चाहते थे कि सब के अन्दर ईश्वरीय तत्व का एक भण्डार है; और सबको अपनी इस छिपी हुई शक्ति को अपने अन्दर के सुख, या अपने अन्त:करण के सुख के रूप में ही पहिचानना चाहिए। दूसरे शब्दों में अपने अन्दर छिपी हुई ईश्वरीय शक्ति का दर्शन स्वान्त: सुख (आनन्द) के रूप में ही करना है।

भगवान के ध्यान का अर्थ

आत्मा अन्दर है। उसकी शक्ति अन्दर से उभर कर जीवन में प्रगट होती है। इसलिये बताया गया है कि यह अन्त:करण के सुख के रूप में प्रगट होती है। जिस समय यह शक्ति उभर रही हो; उस समय यदि बाहर के सारे सुख की दुनिया में किसी तरह ताला लग जाये; तो मन अपने स्वभाव से अन्दर के सुख (आनन्द) की ओर खिंच जायेगा।

मन सुख का भूखा है। इसलिये मन अन्दर के सुख में डूबने लगेगा और साक्षात् निराकार ब्रह्म से निकले सुख में मन खोने के कारण, यह निराकार ब्रह्म का ध्यान होगा। ईश्वर के किसी नाम या रूप का ध्यान नहीं होगा।

यह शक्ति जिसे हम अन्दर के सुख के रूप में पहिचानते हैं, अनुभव तो की जा सकती है; लेकिन किसी दूसरे व्यक्ति को बतायी, या समझायी नहीं जा सकती।

जिस विधि से, अन्दर का सुख कम-से-कम समय में, अधिक-से-अधिक उभारा जा सके; वही ईश्वर के ध्यान की विधि होगी।

ईश्वरीय शक्ति को अन्दर से बाहर उभारने की विधि ही, ईश्वर का ध्यान

है। हमें जानना चाहिए कि यह शक्ति उभरती कैसे है? मनुष्य काम करते -करते थककर, आराम करने लगात है; और सो जाता है। सोकर उठने के बाद या तो वह कहता है कि नींद ठीक से नहीं आयी, इसलिए सिर में कुछ दर्द है और शरीर टूट रहा है। अथवा

> **वह यह कहता है कि इतनी गहरी नींद आयी कि आनन्द आ गया। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा, जो कभी यह कहे कि इतनी गहरी नींद आयी कि दुःख से भर गये।**

प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों? नींद के समय दुःख उभरता ही नहीं, केवल सुख ही उभरता है। उभरे हुए इस सुख का वर्णनकिसी दूसरे को; न बताया जा सकता है, न समझाया जा सकता है। यही प्रमाण है कि सोते समय जो सुख उभरता है, वह ईश्वरीय तत्व से निकला हुआ आनन्द है। सोते समय जितना सुख उभरना होता है; उभर जाता है। इसके विपरीत यह सम्भव नहीं कि हम जितना सुख चाहें, उभार लें।

> **मनमाना कर सकने की जो भी थोड़ी शक्ति मनुष्य के अन्दर हैं, वह केवल तब है; जब वह जागृत अवस्था में है।**

इसलिये केवल जागृत अवस्था में ही यह सम्भावना हो सकती है कि हम अपनी स्वतन्त्र इच्छा (Free Will) के आधार पर कुछ ऐसा करें; कि इस शक्ति को उभारने में निपुण होते चले जायें; और हम जितना चाहें उतना इसे उभार लें।

इस शक्ति को उभारने के लिए जागृत अवस्था में वह बात होनी चाहिए, जो कि सोते समय होती है। अन्तर तो केवल जागने और सोने का रहेगा। तब जागृत अवस्था में ही निश्चय ही ईश्वरीय शक्ति उभरने लगेगी। अभ्यास से हम इस शक्ति को जितना चाहें, उतना उभार लेंगे। अन्दर की शक्ति जब इतनी उभर जाये कि जागृत अवस्था में मन को बाहर का सुख तो अपनी ओर खींचे, ओर अन्दर का सुख अपनी ओर। धीरे-धीरे जीत अन्दर के सुख की होने लगे, तो इस अवस्था में मन ईश्वरीय शक्ति को बिल्कुल ऐसे अनुभव करेगा; जैसे जागृत अवस्था में बाहर की शक्तियों (जैसे ठंडक या गर्मी) को अनुभव करता है।

> **सोते समय हम कुछ नहीं करते। उस समय करने की बात तो होती ही नहीं। केवल होने की बात होती है।**

हम आराम करने की अवस्था में रहते हैं। सोते समय ज्ञानेन्द्रियों में इतनी शक्ति नहीं रहती कि बाहर के सुख का अनुभव कर सकें। इसलिए मन, बाहर की दुनिया में विचरण कर ही नहीं सकता। लेकिन मन के पास दो दुनिया हैं; बाहर की दुनिया और अन्दर की दुनिया।

> **अन्दर की दुनिया में विचरण करते समय, मन हमारे अन्दर के संस्कारों के बीच विचरण करता है। अन्दर की दुनिया में केवल दो चीजें हैं - आत्मा की शक्ति है; और हमारे जन्म जन्मान्तर के संस्कार।**

सोते समय जब अन्दर की शक्ति उभरती है, तो स्वाभाविक है कि वे संस्कार, जिनमें आत्मा ढकी है; वे भी उभरी अवस्था में होंगे। इसलिए यह समझना कितना आसान है? कि संस्कारों के बीच में ईश्वरीय शक्ति है; जो कि चैतन्यता से भरी है। इस चैतन्यता के कारण ही सोती हुई अचेत अवस्था को धीरे-धीरे, चैतन्यता मिलने लगती है। जब मनुष्य अवचेतन (Sub-conscious) अवस्था में आ जाता है; उस समय मन जैसे संस्कारों के बीच भ्रमण करता है, वैसे स्वप्न देखने लगता है। धीरे-धीरे चैतन्यता बढ़ती है; और मनुष्य का स्वप्न टूट जाता है। वह जागृत अवस्था में आ जाता है। ऊपर की बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि

> **ईश्वरीय शक्ति को उभारने के लिए ईश्वर के नाम या रूप का ध्यान नहीं करना है। दूसरे शब्दों में मन को नाम या रूप पर एकाग्र नहीं करना है। क्योंकि ऐसा कुछ भी हम सोते समय नहीं करते। सोते समय हम मन के बहाव में, अड़ंगा लगाने की स्थिति में रहते ही नहीं।**

अत: हमें केवल ध्यान पर बैठना है। मन को छुट्टा (Relax) छोड़ देना है। जब भी हम कहीं एकान्त में, आंख बन्द करके, अन्दर का सुख उभारने हेतु बैठेंगे; तब सुख उभरने के कारण ही, हमारा मन बैठने में अधिक लगेगा।

ध्यान की विधि

इधर कुछ दिनों से समाज में तरह-तरह की ध्यान की पद्धतियां प्रचलित हुई हैं। एक साधारण मनुष्य के लिये यह धारण बनाना कठिन हो गया है कि;

किसकी बात माने किसकी न माने? वह किसी की बात माने या न माने, लेकिन अपने अनुभव का आदर तो करना ही पड़ता है। क्योंकि दूसरे को धोखा देना आसान है, लेकिन अपने आपको कोई धोखा नहीं दे सकता।

> **दोपहर को जब सूर्य तेजी से चमक रहा है; केवल किस के कहने से, कोई नहीं मान सकता कि उस समय रात है। कारण केवल इतना है कि वह दिन के सूर्य को स्वयं अनुभव कर रहा है। उसे अपने अनुभव का आदर करना ही पड़ता है।**

इसलिए ध्यान की इस नई विधि को समझने के लिए एक साधारण मनुष्य के अनुभवों का आधार लिया गया है। इसे ठीक से पढ़ने और समझने के बाद ध्यान की इस विधि पर विश्वास करने के लिए; न तो पुराने ग्रन्थों की मान्यता का आधार लेने की आवश्यकता है; और न ही लेखक पर विश्वास करने की। केवल अपने नित्य के जीवन के कुछ अनुभवों के आधार पर ध्यान की इस विधि पर विश्वास किया जा सकता है।

ईश्वर सर्व-व्यापी है; और हर समय है। इसलिए ध्यान का कोई विशेष समय नहीं होता। समाज में कुछ वर्गों में इस मान्यता के कारण कि ध्यान केवल चार बजे प्रात: ही लगता है, वे लोग जो देर तक सो कर उठते हैं, समझते हैं कि वे ध्यान कर ही नहीं सकते। हमने देखा कि

> **ईश्वर के ध्यान द्वारा केवल अन्दर का सुख उभरता है। और सुख हमेशा स्वतन्त्र अवस्था में ही उभरता है; बंधन की अवस्था में नहीं। सुख बंधन के समय उभरता ही नहीं।**

इसलिए जब तक हमारे ऊपर, ये बंधन रहेंगे कि ध्यान केवल किसी विशेष समय ही होता है, या बिना नहाये ध्यान नहीं करना है। अथवा एक प्याला चाय पी लिया, तो ध्यान कैसे करें? तब तक समाज में ईश्वर का ध्यान प्रचलित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। जहां तक ध्यान पर बैठने की बात है; किसी विशेष आसन पर बैठने का नियम फिर एक तरह का बन्धन होगा। यह तो हम देख ही चुके हैं कि अन्दर का सुख आराम के समय उभरता है। इसलिए ध्यान पर इस तरह बैठना है कि हमें अधिक से अधिक आराम मिले। यदि एक आसन पर अधिक समय तक न बैठ सकें, तो ध्यान के समय आसन बदल भी सकते हैं। किसी भी आसन में, एकांत

में, आंख बन्द कर के, किसी कुचालक पर बैठ जाएं। ईश्वर का नाम, केवल एक बार अपने मन में सोच लेना है, वह भी सूक्ष्मता के साथ। फिर अपने मन को छुट्टा (Relax) छोड़ देना; अर्थात् बुद्धि से परे हो जाना चाहिए। ईश्वर के नाम या रूप पर मन को एकाग्र नहीं करना है। ऐसा करते ही मन में बुद्धि से परे के विचार आने लग जाएंगे; जैसा कि स्वप्न की अवस्था में होता है। जब स्वप्न की बात की चर्चा हो रही थी; उस समय हमने देखा कि स्वप्न में जो ऊटपटांग बातें आती हैं, वे सिर्फ इसलिए, क्योंकि मन संस्कारों के क्षेत्र में भ्रमण (मधानी) करता है; और बिल्कुल वही तर्क ध्यान के समय मन के भागने के विषय में होगा। समाज ने इस बात को ठीक से नहीं समझा; और इसको मन का बाहर की दुनिया में विचरना बताया। इसका परिणाम यह निकला कि लोगों ने ध्यान पर बैठना ही बन्द कर दिया।

> **सत्य यह है कि ध्यान के समय अपने अन्दर के विचारों में खो जाना, मन का अन्दर की दुनिया में खोना है; बाहर की दुनिया में नहीं। जिसके अन्दर जैसे संस्कार होते हैं, वैसे ही विचार ध्यान के समय आते हैं।**

ऊपर हम यह भी देख चुके हैं कि उभरते हुए संस्कारों के साथ ईश्वरीय शक्ति; जो कि संस्कारों से ढकी है, उभरने लगती है। इसलिए जब हम मन को छुट्टा छोड़कर बैठते हैं; उस समय जो विचार आते हैं, उन विचारों के क्षेत्र में, सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वरीय शक्ति भी होती है; जिसमें आनन्द है। और इस आनन्द के कारण, जब हम अकेले में, एकान्त में, अंधेरे में आंख बन्द कर के बैठे होते हैं; और बाहर का सुख नहीं लेते, उस समय भी बैठने में मन लगता है। दूसरों शब्दों में

> **बैठने में जितना अधिक मन लगे; हम कह सकते हैं कि उतनी ही अधिक शक्ति उभरने लग गई है।**

जैसा कि ऊपर बताया गया है; ईश्वर का नाम केवल एक बार लेना है। यदि बैठने में मन न लगे; तो रुक-रुक कर ईश्वर का नाम ले सकते हैं, लगभग तीस-चालीस सेकण्ड के अन्तराल पर। लेकिन इस अन्तराल की ओर ध्यान, कभी नहीं जाना चाहिए। अन्तर कम हो या ज्यादा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। किसी ओर ध्यान ले जाना भी, एक प्रयास है। ध्यान के समय किसी

तरह का भी प्रयास नहीं होना चाहिए; क्योंकि प्रयास फिर एक बन्धन हो जायेगा। यदि ध्यान के समय एकान्त वातावरण न मिले, तो भी ध्यान पर बैठना चाहिए। गलती से भी यह प्रयास नहीं होना चाहिए कि बाहर की आवाज हमें सुनाई न पड़े। यदि ध्यान के समय कोई मिलने आ जाय, या कोई और बाधा उठे; तो क्षुब्ध (Irritate) नहीं होना चाहिए। तुरन्त हाथ की हथेलियों को अपने चेहरे पर रख लेना चाहिए; और धीरे-धीरे हथेलियों द्वारा आंख खोलनी चाहिए। बाधा से निपट कर फिर ध्यान पर बैठ जाना चाहिए। यह नहीं सोचना चाहिए कि आज का ध्यान भंग हो गया; और अब ध्यान पर नहीं बैठ सकते। नंगी जमीन पर बैठकर ध्यान नहीं करना है। हमेशा किसी बुरे विद्युत-चालक (bad conductor of electricity) पर बैठकर ध्यान करना चाहिए। हम अपनी पीठ को टेक (तकिया) भी लगा सकते हैं। लेकिन सर का टेक नहीं लगाना चाहिए।

> **ध्यान के बाद थोड़ी देर के लिए जरूर लेट जाना चाहिए। यदि निद्रा आ जाये, तो यही समझना चाहिए कि ध्यान कुछ ज्यादा अच्छा लगा। ध्यान नित्य डेढ़ घंटा प्रतिदिन कम से कम करना चाहिए।**

यदि आधे-आधे घण्टे का नित्य तीन बार ध्यान होने लगे, तो प्रगति काफी अच्छी होगी। यह आवश्यक नहीं कि ध्यान नित्य, एक निश्चित समय पर ही किया जाये, क्योंकि यह भी एक बन्धन होगा। ध्यान कुछ आगे पीछे हो तो इससे कोई हानि नहीं है।

ऊपर बतायी गयी विधि में इस बात का ध्यान विशेष रखा गया है कि जीवन में किसी तरह का बन्धन न रहे। जीवन को सुखी बनाने के लिए हमें अपने अन्दर का सुख उभारना है। यदि हम आज एक साधारण मनुष्य का जीवन देखें, तो पायेंगे कि उसकी हर क्रिया बन्धन युक्त है।

> **बन्धन का अर्थ है : मन के बहाव में रूकावट। यदि हम क्रियाओं के समय इन रूकावटों को नहीं हटा सकते, तो कम-से-कम ध्यान के समय तो हटा ही सकते हैं।**

ध्यान के समय तो केवल विचार आते हैं। इन विचारों को क्रिया का रूप नहीं देना है। ध्यान के बाद हर मनुष्य अपनी स्वाभाविक क्रियाओं में व्यस्त हो जाता है।

> **ध्यान के समय जब हम अपने मन को बहने देने का अभ्यास करते हैं; तो धीरे-धीरे मन में शक्ति बढ़ती है और ध्यान से उठने पर क्रियाओं के क्षेत्र में मन की यह शक्ति, बनी रहने लगती है।**

इसको समझने के लिए हम उदाहरण लेते हैं : एक बच्चा जिसमें चलने की शक्ति नहीं है, उसे हम अंगुली पकड़ कर अभ्यास कराते हैं। धीरे-धीरे एक दिन आता है कि बच्चा बिना किसी सहायता के चलने लगता है। बिल्कुल इसी तरह

> **मनुष्य जिसके मन में क्रियाओं के क्षेत्र में बहने की शक्ति नहीं है, उसका मन विचारों के क्षेत्र में बहने का अभ्यास करते-करते, इतना अभ्यस्त हो जाता है कि क्रियाओं के क्षेत्र में भी बहने योग्य हो जाता है। और हर तरह की क्रियाओं के क्षेत्र में सुखी रहने योग्य हो जाता है।**

ध्यान की विधि की पुष्टि - ध्यान की विधि से सम्बन्धित शास्त्रों में बहुत-सी बातें मिलती हैं। और इन प्रसिद्ध लिखित प्रमाणों के आधार पर हम देखेंगे कि ऊपर बतायी विधि कोई नई नहीं है। केवल समाज से ध्यान की शिक्षा का लोप हो जाने के कारण, हम हर चीज का गलत अर्थ लगाने लगे; और गलत रास्ते पर चले गये।

गीता कहती है कि ईश्वरीय शक्ति निष्काम (उत्तेजना रहित) कर्मों द्वारा उभरती है। निः का अर्थ है रहित और काम का अर्थ है उत्तेजना। कर्म और क्रिया दो शब्द हैं। क्रिया केवल क्रियाओं के क्षेत्र में होती है, जहां पर कर्मेन्द्रियां काम करती हैं। लेकिन कोई क्रिया ऐसी नहीं हो सकती, जिसके करने से पहले उसे करने का भाव मन में न उठे।

यह भाव या विचार ही कर्म है।

इस प्रकार निष्काम कर्म का अर्थ हुआ; उत्तेजना-रहित विचार। दूसरे शब्दों में हम कहेंगे कि उत्तेजना रहित विचारों द्वारा ही हमारी ईश्वरीय शक्ति उभरती है। जब हम मन को छुट्टा (Relax) छोड़कर बैठते हैं, तो हमारे उभरते हुए संस्कार उत्तेजनाओं से भरे होते हैं। ज्यों-ज्यों समय बीतता है और संस्कार बाहर की ओर निकलते हैं; हमारी उत्तेजनायें स्वयं कम होती जाती हैं।

हमारे मन में विचार तो आते हैं; लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से, वे उत्तेजना-रहित अवस्था में होते हैं। जिस अनुपात में हमारी उत्तेजनाएं कम हो जाती हैं; उसी अनुपात में ईश्वरीय शक्ति अन्दर से बाहर की ओर उभर जाती है। इस तरह हम देखते हैं कि ऊपर बतायी गई विधि, गीता के सिद्धान्त (Theory) के अनुकूल है।

अधिकतर लोग निष्काम कर्म का अर्थ यही लगाते हैं कि 'क्रिया करो, पर फल की इच्छा न करो।' पर 'निष्काम कर्म' का एकमात्र अर्थ यह है कि फल की ताकत अन्दर है; और क्रिया बाहर होती है। जैसे कि पेड़ के फल हमेशा, पेड़ के बाहरी पहलू में होते हैं; और फल देने की शक्ति हमेशा पेड़ के रस में है, जो कि हमेशा जड़ के अन्दर के पहलू में रहती है।

निष्काम कर्म की यह टिप्पणी समाज को केवल इसलिए बतायी गई थी, जिससे कि वह हमेशा याद रखे कि बाहर की क्रियाओं के फल की ताकत ईश्वरीय शक्ति में है। जो कि अन्दर के क्षेत्र में है। और यह शक्ति केवल ईश्वर के ध्यान द्वारा उभरती है। जैसे मधानी द्वारा मक्खन उभरता है।

आध्यात्मिक शिक्षा की कमी में समाज ने धीरे-धीरे इसका अर्थ यह निकाला है कि पढ़ो, लेकिन पास होने की इच्छा न करो।

दूसरी जगह यह कहा गया है कि मन का निर्विषय हो जाना ही ध्यान है। जीवन के दो पहलू हैं- बाहर का पहलू और अन्दर का पहलू। दुनिया के सारे विषय केवल बाहर के पहलू में हैं। अन्दर के पहलू या क्षेत्र में कोई विषय होता ही नहीं। हम यह देख चुके हैं कि

अन्दर की दुनिया में केवल दो चीजें हैं - ईश्वरीय शक्ति और जन्म-जन्मान्तर के संस्कार।

जब मन संस्कारों के बीच विचरण करता है; तो वह किसी विषय पर नहीं होता। उस समय Inner संस्कारों का अनुभव अन्दर की जाग (consciousness) की शक्ति के आधार पर होता है।

बाहर की दुनिया की अनुभूति बाहर के जाग की शक्ति के आधार पर होती

है; अन्दर की जाग के आधार पर नहीं। समाज ने इस बात को ठीक से नहीं समझा; और अन्दर के संस्कारों के क्षेत्र में मन के भ्रमण (मधानी) को, बाहर की दुनिया में मन का भागना बताया। केवल मन के शून्य हो जाने की अवस्था को निर्विषय अवस्था समझ कर, ध्यान पर बैठ कर मन को शून्य करने की कोशिश करने लगे। सत्य तो यह है कि जितनी देर वह मन को शून्य करने के प्रयास में व्यस्त रहते हैं, उतनी देर उनके पास एक विषय रहता है- मन को शून्य करना। और तब तक मन निर्विषय हो ही नहीं सकता।

सर राधाकृष्णन ने भी कहा है - (Meditation is objectless concentration). सच यह है कि उन्होंने अपनी तरफ से कुछ भी नहीं कहा। उन्होंने जो कहा-वह इस बात का अंग्रेजी अनुवाद है कि, 'मन का निर्विषय होना ही ध्यान है।'

अब यह बताने को रह गया है कि; एक बार भी ईश्वर का नाम क्यों लेना पड़ता है? आखिर ईश्वर के नाम में क्या विशेष बात है? जिसके कारण रामायण में यह लिखा है कि इस नाम के सहारे अंदर की दुनिया में गोता लगाना बहुत आसान है।

जब भी किसी को कहीं जाना हो, तो सवारी (Vehicle) मिलने से यात्रा सुखद और सरल हो जाती है। जब हम ध्यान पर बैठते हैं; तो मन को बाहर की दुनिया छोड़कर, अन्दर की दुनिया में जाना है। मन तो हमेशा सूक्ष्म है। बाहर की दुनिया स्थूल है; और अन्दर की सूक्ष्म। आवाज का स्थूल स्तर, बोलना है। और सूक्ष्म स्तर सोचना है। मन स्थूल जगत की आवाज को स्थूल ज्ञानेन्द्रियों के सहारे अनुभव करता है। परन्तु सूक्ष्म जगत में उसे कोई माध्यम नहीं चाहिए। परन्तु सूक्ष्म जगत में जाने के लिए, सूक्ष्म सवारी (Vehicle) तो चाहिए ही। अर्थात स्थूल आवाज स्थूल तरंगें उत्पन्न करती हैं; और सूक्ष्म क्षेत्र में सूक्ष्म आवाज (सोचना) सूक्ष्म तरंगें पैदा करती है।

ईश्वर का नाम सोचना, केवल सूक्ष्म आवाज है; जो सूक्ष्म जगत में सूक्ष्म तरंगें पैदा कर देती हैं, और मन इन सूक्ष्म तरंगों पर बैठकर अन्दर चला जाता है।

भारत सदा से अध्यात्म का देश है। अध्यात्म, एक वैज्ञानिक विषय है। हमारे महात्मा इस विषय के वैज्ञानिक थे। उन्होंने पूरे विश्व के उत्थान के लिए, उन

शक्तिशाली नांदों या आवाजों की खोज की; जिनको केवल सोच लेने से मन में सूक्ष्म तरंगें उठ सकें। ऐसे शक्तिशाली मन्त्र और शब्द, ईश्वर के नाम बन गये। और यही कारण है कि ईश्वर के जितने महत्वपूर्ण नाम हमारे देश में पाये जाते हैं, उतने विश्व में कहीं नहीं पाये जाते।

सवारी केवल तभी तक चाहिए जब तक यात्रा पूरी न हो जाये। ठिकाने पर पहुंच जाने के बाद किसी को सवारी नहीं चाहिए। हमारे मन को बाहर की दुनिया से अन्दर की दुनिया में जाना है। और केवल यात्रा से पूर्व उसे सूक्ष्म तरंगें चाहिएं। केवल एक बार ईश्वर का नाम लेकर मन को छुट्टा (Relax) छोड़ते ही, मन अन्दर की दुनिया (ठिकाने) में चला जाता है; और दुबारा ईश्वर का नाम नहीं लेना पड़ता।

दूसरे शब्दों में ईश्वर का नाम छूट जाना ही; ईश्वर का ध्यान है।

यदि हम संत तुलसीदास के रामचरित मानस की बात करें, तो राम के नाम का माहात्म्य बताते हुए, उन्होंने यही कहा है कि –

नाम लेत भवसिन्धु सुखाहीं।

जिसका अर्थ यह निकलता है कि ईश्वर का नाम, इतनी शक्तिशाली आवाज है कि केवल सोचने से ही बाहर का पूरा मायावी समुद्र, सूख जाता है। बाहर की दुनिया केवल तब तक है, जब तक बाहर की दुनिया का होश है। जब हमारी जाग (co[illegible]) [illegible] समय तक मन के लिए बाहर की दुनिया सूखी होती है। ऊपर की बात से यह स्पष्ट है कि ईश्वर का नाम छूट जाना ही ध्यान है। अपना ध्यान निम्न चौपाई पर भी दें –

राम निरूपन नाम जतन ते।

सोउ प्रगटत मोल रतन ते॥

इस चौपाई के द्वारा संत तुलसीदास ने ध्यान की विधि सिखाने का प्रयत्न किया। हम देखते हैं कि कवि ने यही कहा है कि यदि तर्कपूर्ण विवेचना के आधार पर, बिधि से नाम लें; तो ईश्वर शक्ति अनमोल रत्न के रूप में प्रगट हो जाती है। ऊपर की दूसरी लाइन में महाकवि ने यह बताया है कि नाम इस तरह लेना है; कि

ईश्वरीय शक्ति अनमोल रत्न के रूप में प्रगट हो। अनमोल रत्न हमेशा उसे ही प्राप्त होता है, जो समुद्र में गहरा लगाना जानता हो।

विद्यार्थियों को प्रतिभावान कैसे बनाएं?

प्रश्नकर्ता : श्री राज कुमार जैन, कुल्लू (094180-35624)

एक घर में हजार वाट का बल्ब जल रहा है। घर रोशनी से जगमगा रहा है। चारों ओर चहल पहल है। रात के अन्धेरे से उन्हें कोई वास्ता नहीं है।

दूसरे घर में सौ वाट का बल्ब जल रहा है। स्त्रोत एक ही है। फिर भी क्या कारण है कि वहां जगमगाहट बहुत कम है?

कारण यही है कि हजार वाट के मुकाबले में सौ वाट के बल्ब की रोशनी केवल दसवां हिस्सा है। बाकी नौ हिस्से अंधेरा है।

अन्धेरा भी सर्वव्यापी है। अन्धेरे का कोई अन्त (Boundary)

नहीं है। अन्धेरा अन्तहीन (Boundaryless) है।

सूर्य की रोशनी असीम है। इसके उदय होते ही, हजार वाट का बल्ब भी फीका पड़ गया। प्रकृति में जहां तक सूर्य, चांद, सितारों का वश चलता है, वे धरती पर अपना प्रकाश अर्पण कर देते हैं और अन्धेरे को दूर भगाने का प्रयत्न करते हैं।

अध्यात्म में अन्धेरे की तुलना अज्ञान से एवं प्रकाश की तुलना ज्ञान से की है। विश्व में चारों ओर अज्ञान ही अज्ञान फैला है। संत तुलसीदास के अनुसार माया (Ignorance) का क्षेत्र बहुत विशाल है –

गो गोचर जहं लगि मन जाई।

सो सब माया जानो भाई॥

घर में भी अक्सर देखा जाता है कि एक बालक बहुत होशियार है। विद्यालय में शिक्षक पढ़ाता है, वह वहीं grasp कर लेता है। उसे कोई परिश्रम नहीं करना पड़ता। उस के मुकाबले में दूसरा बालक कतई निखद है। पिता ने उसके लिए Tuition इत्यादि का पूरा प्रबन्ध कर रखा है। परन्तु वह टस से मस नहीं हो पा रहा। सभी दु:खी हैं कि उसके भविष्य का क्या होगा?

स्त्रोत एक ही है। फिर भी ऐसा क्यों?

यदि पहिला बालक हजार वाट की जागृति लेकर पैदा हुआ है, तो दूसरे में केवल सौ वाट की जागृति है। वह बाकी नौ सौ वाट की थकावट (अंधेरा) लेकर पैदा हुआ है।

थकावट बाहर से प्रतीत नहीं होती। जन्म जन्मात्रों की थकावट (संस्कार) साथ चलते हैं।

इस कलयुग में यही विडम्बना है। स्वास्थ्य और बुद्धि के विकास के लिए तो खूब पाठशालाएं एवं शिक्षक उपलब्ध हैं। परन्तु मन की जागृति के लिए या तो शिक्षक उपलब्ध नहीं है? अथवा किसी को विश्वास ही नहीं है कि मन को उजागर करने का भी कोई रास्ता है। इसी अज्ञानता वश सभी दुखी हैं और चारों ओर हा हाकार मचा है। Discipline कतई समाप्त हो गया है।

श्रीमद्‌भगवद्‌गीता, रामायण एवं दूसरी आध्यात्मिक पुस्तकें सभी धरों में उपलब्ध हैं। परन्तु उन्हें बुजुर्गों का विषय समझा जाता हे। सेवानिवृत व्यक्ति भी

अपने आप को बुजुर्ग कहलाने में कतराता है। वह भी उन पुस्तकों की ओर कतई ध्यान नहीं देता। मन की शिक्षा, इन पुस्तकों में उपलब्ध है।

मन ही एक ऐसा यन्त्र है, जिसको ज्ञान से रोशन किया जा सकता है। इस द्वारा माया रूपी अन्धकार को किसी हद तक दूर कर सकते हैं। मन में दुःख ही, मन का अन्धकार है।

अध्यात्म की शिक्षा लुप्त हो गई है और अत्याचार अपने शिखर पर है। अध्यात्मिक शिक्षा को बेकार समझा जाता है। सभी जीवों के मुकाबले में केवल मनुष्य ही एकमात्र ऐसा जीव है जो जितनी चाहे, मन की जागृति बढ़ा सकता है।

मानव योनि अनमोल है, मेटे दुःख समूल।
अद्वैत चेतना प्राप्त कर, छोड़ें अच्छत दुकूल॥
(ध्यान माला : दोहा-16)

अनन्त योनियों में केवल मनुष्य योनि में ही जीवात्मा के अनन्त स्तर तक उत्थान की संभावना है। इसीलिये मानव योनि अमूल्य है, जिसे प्राप्त करने की इच्छा सभी योनियां करती हैं। 'मानस' अनुसार :-

'नर तनु सम नहिं कवनिउ देही।
जीव-चराचर जाचत जेही॥

अब प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य योनि में उच्चतम उत्थान की संभावना कैसे है? मनुष्य भी अन्य शरीरधारियों (प्राणियों) की भांति घोर निद्रा, स्वप्न और जागृति अवस्था की तीन चेतनाएं लेकर जन्म लेता है। लेकिन अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य की बाह्य शारीरिक बनावट एवं अन्दर की संरचना कुछ इस प्रकार की (अन्य प्राणियों से भिन्न) होती है : जिससे वह ध्यान की साधना कर सके और उक्त (निद्रा, स्वप्न और जागृति की) तीन जागों (चेतनाओं) से उच्चतर स्तर की भावातीत, ब्रह्मी, ईश्वरीय और अद्वैत चेतना को प्राप्त करने की क्षमता प्राप्त कर सके। मनुष्य के लिये अद्वैत Union चेतना प्राप्त करना अन्तिम अवस्था है। इसमें उसे सब कुछ तत्काल, बिना कुछ किये (क्रियाओं और पदार्थों की सहायता के बिना) प्राप्त रहता है। इसीलिये मानव योनि अमूल्य है।

अछत (अक्षत) का अर्थ है : जिसमें कोई टूट-फूट न हो।

दुकूल (कपड़ा) शब्द अध्यात्म में शरीर के लिये प्रयोग किया जाता है। जिसने जन्म लिया है, अर्थात् जिसके भी जीवन का आरम्भ शरीर के साथ हुआ है: उसका शरीर, प्रकृति के नियमानुसार, कभी न कभी नष्ट हो ही जाएगा। परन्तु **अद्वैत चेतना प्राप्त व्यक्ति अपना शरीर अनन्त काल तक बनाये रख सकता है। इसलिये वह शरीर टूट-फूट से रहित कार्य करने में पूर्ण सक्षम रहता है। इसी बात को संत कबीरदास ने अपने बारे में कहा है -**

'जैसी की तैसी : धर दीनी चदरिया।'।

जीवात्मा परमात्मा का अंश है। परमात्मा स्वरूप होने के लिए उस परमपिता परमेश्वर के गुणों का, सभी जीवों का हक है। परमात्मा असीम है। वह अखण्ड शक्ति, अखण्ड आनन्द, अखण्ड ज्ञान, अखण्ड प्रेम और अखण्ड स्वास्थ्य का भण्डार है। सूर्य की रोशनी तथा गर्मी का आनन्द लेना है, तो धूप में बैठना ही पड़ेगा। इसी तरह भगवान के गुणों के इच्छुक हो, तो भगवान की उपासना (उप + आसन), अर्थात समर्पित होना ही पड़ेगा।

इसके लिए करना क्या है?

जैसे सोते समय बिस्तर पर विश्राम (Relax) करते हैं, वैसे ही प्रात: जागने के उपरान्त शीघ्र अति शीघ्र बिस्तर, कुर्सी अथवा अन्य किसी कुचालक पर बैठकर कम से कम 30 मिनट के लिए आंखे बन्द कर के बैठकर Relax हों। विद्यार्थी के लिए तो यह, संजीवनी बूटी है। विद्यार्थी जीवन को ब्रह्मचर्य (ब्रह्म में आचरण) आश्रम कहा जाता है। तीन घंटे का कार्य दो घंटे में समाप्त होगा। आधा घंटा Relax ही तो करना है। विचारों की ओर कोई ध्यान नहीं देना है। कोई Planning नहीं बनानी है।

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि है मैं नाहि।
प्रेम गली अतिसांकारी, या में दो न समाहि॥

जब तक आपा रहता है, तब तक प्रभु से परिचय नहीं हो पाता। आपा मिटते ही प्रभु से मिलन हो जाता है। प्रेम की यह विलक्षणता है कि यद्यपि यह प्रारम्भ, दो में होता है, तथापि जब तक द्वैत बना रहता है; तब तक परिपूर्णता नहीं आती। द्वैत की समाप्ति पर ही परिपूर्णता आती है। प्रेम के लिए दो के लिए स्थान नहीं है। (संत कबीर)

सहज ध्यान

✍ श्री चिरंजी लाल राजपाल
लाजपत नगर, हिसार (098132-51999)

जो करते 'ध्यान' से प्रीत, वही नर तर जाते हैं।
जो मन को लेते जीत, वही नर तर जाते हैं॥
हीरे जैसा जन्म अनमोल, शुभ कर्मों से पाया;
इसकी तूने सार न जानी, माटी में इसे मिलाया।
जो विषयों को लेते जीत, वही नर तर जाते हैं॥१॥
शरीर रथ है, बुद्धि सारथी, इन्द्रियां इसके घोड़े;
ध्यान द्वारा, जो मन को आत्मा संग जोड़े।
उसका होवे निर्मल चित्त, वही नर तर जाते हैं॥२॥
काम क्रोध मद् लोभ मोह को, तुमने तजना;
यम नियम का पालन करके, उस पर चलना।
है धर्म की यही रीत, वही नर तर जाते हैं॥३॥
दुःख-सुख, लाभ-हानि, यश-अपयश, मान-अपमान को सहिये;
नारायण संयम रखने वाला ही, सच्चा प्राणी कहिये।
हो जग में उसी की जीत, वही नर तर जाते हैं॥४॥

लेखक ने भजन के माध्यम से प्रस्तुति की है। ध्यान योग का कठिन मार्ग पहले सुन रखा था। उस समय यह बड़ा कठिन लगता था।

> **'सहज ध्यान' के बारे में, जिस दिन से डॉ० शम्भू नाथ के सत्संग में जाना** (Realized) **कि कुछ नहीं करना; मैं अहलादीन हो कर खिल उठा, कि यह ध्यान बड़ा सरल और सहज है।**

इसके बारे में डॉ० बनारसी दास ने बताया था कि कमरे में आप चुपचाप, अंधेरे में, दिन में तीन बार 30-30 मिनट नियमित बैठें। किसी भी ढंग से बैठें, आप को सारी छूट है। परन्तु अपने नीचे कपड़ा रखना है और दीवार के साथ भी नहीं

लगना।

> **आज तक मैं मस्त हूं। धीरे धीरे अपने सारे दुर्गुण निकल जावेंगे। जैसे तीन मास का बालक जब मल से लथपथ होकर पीढ़े में पड़ा रो रहा हो; तो मां उसे उठाकर धो धाकर फिर उसे दूध पिला कर पीढ़े पर पड़ा देती है। बालक अब मस्त होकर आनन्दित खिल रहा है।**

ठीक उसी प्रकार, जो ध्यान साधना में डाक्टर साहब के बचनों पर चलता है; वह जिंदगी भर खुशियों से आनन्दित रहता है। इन्हीं विचारों से आप सभी ध्यान साधना से जुड़ जाइए। बस ब्रह्म की आपके ऊपर कृपा बरसेगी। इससे जीवन खुशियों से लद जाएगा।

सत्य ही ईश्वर है

✍ श्रीमती ऊषा गर्ग (089012.65520)

सत्य के साथ एक शक्ति होती है। और झूठ के साथ भीड़ जुटानी पड़ती है। सत्य के साथ जो शक्ति है, उसी का नाम परमात्मा है। सत्य जिसके साथ होता है, उसको अन्य किसी साथ की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। जो सत्य से जुड़ जाता है, उसका विरोध भी नहीं होता। क्योंकि सत्य तो सत्य है; और सत्य एक ही होता है। जो सत्य से जुड़ा आदमी हमेशा आनन्दित भी रहेगा। उसमें हमेशा उल्लास, प्रसन्नता जैसे गुण आ जाते हैं। क्योंकि ये सत्य के गुण हैं। इन्हीं से ही आदमी अपने को बहुत ऊंचा उठा सकता है; और अपना जीवन सफल बना सकता है।

> **मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य तो उसी सत्य को ही पाना है। संसार में आए हैं। समाज के भी काम करने हैं। परन्तु उन कामों को पूरा करने के लिए सत्य का साथ लें। काम पूरे तो होंगे ही; और कई गुणा बढ़िया भी और समय से पहले होंगे।**

हर काम को उलझन समझ कर नहीं; उसको भगवान् का भान करें; तो उसमें भगवान् की शक्ति अपने आप मिल जाएगी। हमें ज्यादा प्रयास भी नहीं करना पड़ेगा। संसार के कामों के साथ साथ अपना संसार में आने का मुख्य उद्देश्य भी पूरा होगा। अगर अकेला संसार को पकड़ने की कोशिश करेंगे तो अपनी इच्छाओं के जाल में उलझ के रह जाएंगे। जितना इस दलदल से बाहर आने की कोशिश करेंगे; उतने और फंस जाएंगे।

तो इस सत्य की शक्ति को कैसे पाया जाए? इसको पाने का बहुत सरल तरीका है। आप दिन में तीन बार 30-30 मिनट, बस आंख बन्द करके, एक बार मन में राम का नाम सोचना मात्र है। जिस सुख-आसन में चाहें; सोफे अथवा कुर्सी पर। जमीन पर बैठने के लिए आसन जरूर बिछाना है। क्योंकि जो शक्ति हमारे में पैदा हुई; वह जमीन में न जा सके। नहीं तो हम खाली रह जाएंगे। मात्र यही करने से; मन में शान्ति, आनन्द, प्रसन्नता, धीरे धीरे सब आने आरम्भ हो जाएंगे। क्योंकि यह सब भगवान् के गुण हैं। कहते है न 'जैसा संग, वैसा रंग।

जीवन में जो सुख शान्ति से जीना चाहते, आज।
छुपा है इन्द्रियों के संयम में, वह राज॥ ❑

भगवद् कृपा

✍ **श्री महेन्द्र सिंह जांगड़ा (094676-07109)**

श्री मद् भगवद्गीता के 700 श्लोकों के माध्यम से श्रीकृष्ण ने अपने गोपनीय से भी गोपनीय विधि बतलाई। गीता सारे वेदों और उपनिषदों का सार है। गीता का भी सार है परमात्मा के प्रति समर्पण (Surrender).

शरीर, मन, बुद्धि, अहंम और सभी इन्द्रियां भगवान की देन हैं। ऐसे भाव बनाकर एकान्त में और अन्धेरे में आसन लगा कर बैठ जावें।

विचार उदय होते हैं। जो विचार किया जाता है, उसमें क्रिया होती है। क्रिया, मन और बुद्धि द्वारा होती है।

परन्तु विचार उदय होने पर बुद्धि से सम्बन्ध टूट जाता है। विचार उदय होते-होते, विचार स्वयं खत्म हो जाते हैं। तब संसार का कोई विचार ही नहीं रहता।

विचार के खत्म होते ही, दिखने वाला दृश्य, दर्शन और दृष्टा; तीनों खत्म हो जाएंगे। फिर आपके अन्दर परमात्मा की शक्ति प्राप्त हो जाएगी। संत कबीर ने कहा है :-

जब हरि था, तब मैं नाहि।
जब 'मैं' है, तब हरि नाहीं॥

हम परमात्मा के अंश हैं। जीवात्मा हमारे अन्दर है। इसलिए बाहर भीतर से चुप होना है। ना बाहर से काम। ना ही कोई अन्दर से काम। एक बार ईश्वर का कोई नाम सोचकर सुखदायक आसन पर बैठ जावें। मन को छुट्टा छोड़ देना है। मन में जो बात याद आए, उसे रोकना नहीं हैं। ना ही हटाना है। ना लगाना है। उसे होने देना है। कुछ भी नहीं करना है। पुरानी बात याद आती है, तो आने दें। रोकें मत। बात याद आ नहीं रही है, परन्तु निकल रही है।

'मैं' (अहं), मन, बुद्धि, वाणी, शरीर या इन्द्रियों द्वारा जो हम क्रिया करते हैं। उस क्रिया के साथ हमारा सम्बन्ध होता है। फिर सम्बन्ध से बन्धन होता है। फिर हमारे चित्त पर ये संस्कार जमा हो जाते हैं। संस्कार इकट्ठा करने में इन सबकी सहमति होती है। जब संस्कार निकलते हैं, तब अन्दर केवल मन ही क्रिया करताहै । हल्के फुल्के संस्कार जल्दी निकल जाएंगे। गहरे बार-बार आएंगे। दिन में 30-30 मिनट, तीन बार बैठने से मन, बुद्धि और शरीर की शक्तियों का बहुत जल्दी विकास होगा।

भगवान सच्चिदानन्द हैं। पहले आप को शक्ति का आभास होगा। फिर धीरे-धीरे आप का चित्त (होश) जागृत हो जाएगा। इस क्रिया के द्वारा भगवान् को जाना जा सकता है। फिर तुम्हारे द्वारा केवल अच्छे काम ही होंगे। ❑

बच्चों के लिए सहज ध्यान

✍ **डॉ० बलदेव राज नाशा**

बच्चों में ईश्वर की शक्ति सबसे अधिक होती है। इसलिए वे सबको अच्छे लगते हैं। उम्र बढ़ने के साथ साथ यह शक्ति खर्च होकर धीरे-धीरे कम होती जाती है। ध्यान द्वारा इस शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए बच्चों को प्रात: ध्यान के लिए बैठने की शिक्षा देनी चाहिए। बच्चों को एकान्त में चुपचाप आंखें बन्द करके बड़े आराम से बैठना चाहिए। बैठे-बैठे थक जाएं तो आसन बदल लें।

ध्यान द्वारा मन, बुद्धि और शरीर में ईश्वर की शक्ति भर जाती है। इससे मन प्रसन्न रहता है। बुद्धि तेज हो जाने से कुछ भी याद

करना बहुत आसान हो जाता है। पढ़ाई में मन खूब लगता है। शरीर में ईश्वर शक्ति बढ़ जाने से बच्चे स्वस्थ एवं चुस्त रहते हैं। आपस में प्रेम, सहयोग एवं अनुशासन पैदा होता है।

अपने घर में बड़ों को ध्यान पर बैठे देखकर बच्चे बहुत जल्दी ध्यान के लिए अपने आप ही बैठने लग जाते हैं। इससे विद्यालय के परीक्षा परिणाम भी बहुत अच्छे आने लगते हैं। यदि अध्यापक और अध्यापिकाएं भी ध्यान के लिए बैठें तो बच्चों को सिखाना बहुत आसान रहता है। स्वयं को भी बहुत लाभ होता है।

ध्यान के समय खेल-कूद, पढ़ाई-लिखाई, खाने, पीने और स्कूल जाने आदि के विचार आएं, तो आने दें। उन्हें लाना या रोकना नहीं है। बच्चों को कम से कम उनकी आयु के अनुसार बैठाना चाहिए। 10 वर्ष के बच्चे को 10 मिनट, 20 वर्ष वाले को 20 मिनट बैठाना चाहिए। अपने घर पर बच्चे अपनी रुचि के अनुसार, और अधिक समय के लिए भी बैठ सकते हैं। इससे लाभ अधिक मिलेगा।

सामूहिक ध्यान का लाभ बहुत अधिक होता है। अनेक साधकों के अनुभव सुनने का अवसर मिलता है। क्रमबद्ध ध्यान की शिक्षा और ध्यान के अनुकूल वातावरण के कारण नए साधक भी शीघ्र ही इस रास्ते को अपना लेते हैं। ध्यान के सिद्धान्त एवं प्रयोग दोनों को एक साथ ही सीख जाते हैं।

ध्यान का मतलब है : समर्पण। अर्थात् ईश्वर की शरण में जाना। इसके लिए एकान्त में आंखें बन्द करके चुपचाप बैठ जाएं। कोई विचार आने लगे तो आने दें। **हमारे अन्दर भगवान और विचार दोनों होते हैं। मन में अपने आप भगवान की शक्ति भरने लगती है। पुरानी बातें, संस्कार या भविष्य की योजनाएं, विचारों के रूप में निकलने लगते हैं। जो होता है, होने दें। अपने को भगवान पर छोड़ देना है।**

बच्चों का ह्रदय कोमल होता हैं समर्पण शक्ति अत्याधिक होती है। बचपन के संस्कार डले हुए, उनको सारी उम्र प्रभावित करते हैं। वे बहुत संवेदनशील होते हैं। अत: अचपन से ही उन्हें अच्छे संस्कार दें ताकि उनका भविष्य उज्जवल हो। ❑

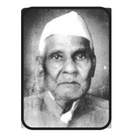

ध्यान माला

✍ श्री कुबेर प्रसाद 'गुप्त कबीर'

दोहा-63 : निष्क्रिय होने से मिले, ऋद्धि सिद्धि समुदाय।
ईश कृपा से है मिला, कहते सन्त सुभाय॥

मनुष्य समझता है कि यदि उसकी आर्थिक व्यवस्था ठीक हो, या धन कमाने का तनाव मन पर न रहे; तो वह अधिक से अधिक आराम करने में सक्षम रहेगा। निष्काम कर्म (Meditation) ही हमें पूर्ण आराम की ओर ले जाने में सक्षम है। मात्र पूर्ण आराम में दैवी शक्ति है। दूसरे शब्दों में कम से कम प्रयास द्वारा अधिक से अधिक मन की संतुष्टि; मन के अनुकूल परिस्थितियां दे सकती हैं। इस तरह से हम यह देखेंगे कि; निष्काम कर्म हमारे जीवन के आराम से कितना गहरा सम्बंध रखता है?

आराम या प्रयासहीनता पर्यायवाची हैं। अत: इनका विलोम ही प्रयास है। हमारा जीवन स्थूल और सूक्ष्म कर्मों में बंटा हुआ है।

जब तक कर्म है; केवल तभी तक जीवन है।

स्थूल कर्मों का क्षेत्र ही बुद्धि का क्षेत्र है; और यही प्रयास का क्षेत्र है। मात्र प्रयास के क्षेत्र में प्रयास की सम्भावना है। प्रयासहीन कर्म सूक्ष्म होते हैं। जिस क्षेत्र में ये कर्म होते हैं; उस क्षेत्र में प्रयास की सम्भावना ही नहीं है। इसलिए जब तक बुद्धि और इन्द्रियों की मदद से मन स्थूल इन्द्रिय क्षेत्र में विचरण करता है; तब तक तुलनात्मक दृष्टि से किसी क्रिया में प्रयास अधिक; और किसी क्रिया में प्रयास कम होता है। लेकिन पूर्ण प्रयासहीनता की सम्भावना असम्भव है।

पूर्ण प्रयासहीनता की पहली शर्त यह है; कि मन प्रयास के क्षेत्र को (दूसरे शब्दों में बुद्धि के क्षेत्र को ही) छोड़ दे अर्थात् बुद्धि से परे जगत में विचरण करे। ऐसे विचरण ही निष्काम कर्म हैं।

निष्काम कर्म, पराजगत में मन का विचरण, पराजगत की शक्ति प्राप्त करने के लिए होती है। पराजगत में 'करना' असम्भव है।

इसीलिए हम कहते हैं कि इस क्षेत्र में बहुत कुछ होता है; लेकिन किया कुछ नहीं जाता। मनुष्य जब घोर निद्रा या स्वप्न की दुनियां में रहता है; तब अन्दर की दुनिया में बहुत कुछ होता है, लेकिन किया कुछ नहीं जाता। वे वैज्ञानिक, जो हमारे

शरीर के आन्तरिक जगत के अनन्त स्वत: होते हुए कर्मों से परिचित हैं; वे अच्छी तरह जानते हैं कि अन्दर की दुनिया में न मालूम कितनी तरह की गतियां हैं। वे अपने आप होती हैं; की नहीं जातीं। अर्थात् करने वाला मात्र आराम है।

आन्तरिक जगत की ये गतियां जितनी सुचारू रूप से चलती हैं; उतना ही हमारा मन खुश रहता है। बुद्धि में सही दिशा में सोचने की शक्ति उतनी ही ज्यादा रहती है; और शरीर भी उसी अनुपात में ज्यादा से ज्यादा अच्छा काम करता है। निरोग रहता है। लेकिन आन्तरिक गतिशीलताओं को सुचारू रूप से नियन्त्रित करने वाला, मात्र गहरा आराम है। ऊपर हमने देखा कि

मन की खुशी, बुद्धि की चिन्तामुक्ति और शरीर की निरोगता; हमारे आराम की शक्ति से जुड़ी हुई हैं।

जरा हम समाज की ओर अपना ध्यान ले जाएं; और देखने का प्रयत्न करें कि कितने लोग जीवन की उपरोक्त तीन अमूल्य पराजगत की धरोहर पाने के लिए आराम करने में निपुणता की मदद लेते हैं? सत्य तो यह है कि आज के समाज में एक लाख में एक व्यक्ति भी ऐसा मिलना मुश्किल है। देखा यह जाता है कि मनुष्य अपने शारीरिक कष्टों के निवारण के लिए आराम की कला की मदद लेने की बजाय समाज के अलग-अलग औषधि विज्ञान की औषधियों पर आश्रित रहने लगा है। इसी तरह के जीवन को तरह-तरह की चिन्ताओं से मुक्ति पाने के लिए वह अपनी बाहरी परिस्थितियों को तरह-तरह के प्रयासों द्वारा सुलझाने की कोशिश करता है। समाज का मानना यही है कि हमारी प्रतिकूल परिस्थितियां हमारे कुछ प्रयास की कमी या समझ की कमी की देन है। इसलिए हमें हर चीज ठीक से समझकर और फिर कुछ प्रयास बढ़ाकर वह परिस्थिति पैदा करनी है, जिससे वह चिन्तामुक्त हो सके। ऐसे गलत सिद्धान्तों के आधार पर उसका पूर्ण जीवन व्यतीत हो जाता है; लेकिन चिन्ता-मुक्ति प्राप्त नहीं होती। ज्यों-ज्यों हमारी चिन्ताएं और शारीरिक कष्ट बढ़ते हैं; बाहर के धन से धनी होने के बावजूद हमारे मन में तरह-तरह के दुख बढ़ते चले जाते हैं।

मन, बुद्धि, शरीर; तीनों स्तर के दुख हमारे अन्दर की उत्तेजनाओं के कारण होते हैं। और अब हम यह देखेंगे कि समाज में आयु बढ़ने के साथ-साथ, ये उत्तेजनाएं केवल बढ़ती हैं। ये उत्तेजनाएं हमारे आराम में बाधक हैं।

इस तरह से हम देखेंगे कि यद्यपि पूर्ण आराम की पहली शर्त मन का पराजगत में विचरण है; लेकिन दूसरी शर्त उत्तेजना रहित होना भी है। और जब आयु बढ़ने के साथ साथ ये दोनों शर्तें पूरी होती हैं; तभी हम गहरे आराम की ओर अग्रसर होते हैं।

समाज में अज्ञानतावश मनुष्य ज्यादा समय तक आराम करने को ही अधिक आराम मानता है। गहरे आराम के सिद्धान्त (Theory) का ज्ञान समाज के व्यक्तियों में नहीं है। पूर्ण आराम का सम्बन्ध हमारे आराम (Meditation) से है। अधिक समय तक आरमा करने में नहीं।

नोट : 1. ध्यान पत्रिका का वार्षिक शुल्क 20/- (बीस) रुपये मनी- आर्डर अथवा कैश : अपने Address एवं Contact No. सहित इस पते पर भेजें :-

–Sh. Rakesh Garg, Keshav Lace Emporium,
Shop No. 91, Lajpat Rai (Rehri) Market, Hisar-125001
Mobile : 098967-89678

2. प्रत्येक रविवार को बुधला सन्त मन्दिर, नज़दीक बस स्टैण्ड, हिसार में पारिवारिक ध्यान सत्संग सायं 3 बजे से सायं 5 बजे तक होता है। आप सभी सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

3. ध्यान (Meditation or Self Realization) सम्बन्धी अपने अनुभव, लेख, आलोचना (Comments), अनुभूतियां, प्रश्नोत्तर, शंका-समाधान इत्यादि इस पते पर भेज सकते हैं :-

-सुरेश कुमार गुप्ता
866, सेक्टर 3, अर्बन एस्टेट, रोहतक-124001
E-mail : sureshgupta1936@gmail.com

PRINTED MATTER